किसान आन्दोलन के सामने कुछ सवाल

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के महासचिव, लाल सिंह का मज़दूर एकता लहर के साथ साक्षात्कार

अक्तूबर 2021

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी
नई दिल्ली
www.cgpi.org

किसान आन्दोलन के सामने कुछ सवाल

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के महासचिव, लाल सिंह का मज़दूर एकता लहर के साथ साक्षात्कार

अक्तूबर 2021

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी

नई दिल्ली **www.cgpi.org**

प्रथम प्रकाशन अक्तूबर 2021
इस दस्तावेज़ के किसी भी अंश को प्रकाशक की अनुमति से और स्रोतों को उचित मान्यता देते हुए, अनुवाद किया जा सकता है या पुनः प्रकाशित किया जा सकता है।

मूल्य : 25 रुपये

प्रकाशक :
हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी
ई–392, संजय कालोनी, ओखला फेस–2
नई दिल्ली–110020

वितरक :
लोक आवाज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स
ई–392, संजय कालोनी, ओखला फेस–2
नई दिल्ली–110020
ईमेल : lokawaz@gmail.com
फोन : +91 9868811998, 9810167911

किसान आन्दोलन के सामने कुछ सवाल

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के महासचिव, लाल सिंह का मज़दूर एकता लहर के साथ साक्षात्कार

मज़दूर एकता लहर (म.ए.ल.) : देश के कई इलाकों से आये किसानों के दिल्ली की सरहदों पर विरोध प्रदर्शन के 11 महीने पूरे हो गए हैं। किसान आन्दोलन के बारे में आपका क्या मूल्यांकन है?

लाल सिंह : इस आंदोलन की सबसे बड़ी खासियत यह है कि देश के कोने–कोने से, अधिकतम किसान ग़रीब से लेकर अमीर किसान, सब इकट्ठे हो गए हैं। वे एकजुट होकर संघर्ष कर रहे हैं, इजारेदार पूंजीवादी कारपोरेट घरानों के ख़िलाफ़ और उनकी सेवा करने वाली सरकार के ख़िलाफ़।

500 से अधिक किसान यूनियनें कुछ तत्कालीन मांगों के इर्द–गिर्द एकजुट हो गई हैं। यह एक ऐतिहासिक क़ामयाबी है।

इन तत्कालीन मांगों में सबसे पहली मांग यह है कि 2020 में बनाए गए तीन केंद्रीय किसान क़ानूनों को रद्द कर दिया जाए।

उनमें से एक क़ानून का मक़सद है मौजूदा राज्य द्वारा नियंत्रित बाज़ारों को हटाकर उनकी जगह पर निजी बाज़ारों और पूंजीवादी कंपनियों द्वारा किसानों से सीधी ख़रीदारी को स्थापित करना। दूसरे क़ानून का मक़सद है अनुबंध खेती के दायरे को विस्तृत करना। कृषि उत्पादों के बाज़ार और अनुबंध खेती के समझौते अब तक राज्य सरकारों के नियंत्रण में रहे हैं। यह केंद्रीय क़ानून अब इन सभी राज्यों के क़ानूनों से सर्वोपरि होगा। तीसरा केंद्रीय क़ानून आवश्यक वस्तु अधिनियम में संशोधन करेगा। निजी कंपनियों द्वारा खाद्य पदार्थों के भंडारण पर अब तक जो पाबंदियां लगाई जाती थीं, उन सब पाबंदियों को हटा दिया जायेगा।

टाटा, अंबानी, बिरला, अदानी और हिन्दोस्तान के दूसरे इजारेदार पूंजीवादी घराने, और उनके साथ–साथ, ऐमेज़ॉन, वॉलमार्ट, नेस्ले, कारगिल और दूसरी विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खरबपति मालिक, सब खुशियां मना रहे हैं। इन क़ानूनों के लागू होने से उनकी बहुत समय से लंबित एक मांग और उद्देश्य पूरा होता है। यह मांग है कि कृषि व्यापार और भंडारण के क्षेत्र में निजी कारपोरेट वर्चस्व के ऊपर अब तक लगाई जा रही सभी पाबंदियों को हटा दिया जाए।

हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय इजारेदार पूंजीपति देश के किसी भी कोने में किसी भी किसान से किसी भी क़ीमत पर, किसी भी फ़सल को अपनी पसंद के किसी भी निजी बाज़ार से ख़रीदने की आज़ादी चाहते हैं। वे अपनी पसंद के किसी भी कृषि उत्पाद का मनचाही मात्रा में भंडारण करने की क़ानूनी आज़ादी चाहते हैं। उनका मक़सद है बाज़ार के बड़े से बड़े हिस्से पर अपना वर्चस्व जमाना, ताकि वे पूरे बाज़ार पर खुद नियंत्रण कर सकें। वे खाद्य

पदार्थों के सबसे बड़े ख़रीदार, सबसे बड़े जमाखोर और सबसे बड़े विक्रेता बनना चाहते हैं। ऐसा बनकर, वे खाद्य पदार्थों का उत्पादन करने वालों को भी और खुदरा बाज़ार से खाद्य पदार्थों को ख़रीदने वालों को भी अपनी मनमर्ज़ी से लूट सकते हैं।

तीनों केंद्रीय क़ानूनों को लागू करना किसानों के अधिकारों का घोर हनन है। इसका मक़सद है इजारेदार पूंजीपतियों की लालच को पूरा करना। संसद में इन क़ानूनों को पास किया गया है, जिनका मक़सद है लाखों–लाखों किसानों को पूरी तरह बर्बाद करके, मुट्ठीभर अति–धनवान हिन्दोस्तानियों और विदेशियों की दौलत को खूब बढ़ाना। इन क़ानूनों को किसानों से पूछे बिना, किसानों की मर्ज़ी के बिना, उन पर थोप दिया गया है। इन क़ानूनों को रद्द करने की मांग करते हुए, किसान अपने जीवन पर असर डालने वाले क़ानूनों को बनाने में अपना मत प्रकट करने के अपने अधिकार के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

इन क़ानूनों से ख़तरा सिर्फ किसानों को ही नहीं है। किसानों की कुल आमदनी के घट जाने से खेत मज़दूरों की रोज़ी–रोटी को भी ख़तरा है। खाद्य पदार्थों की ख़रीदारी और वितरण में राज्य की भूमिका के घट जाने से और निजी कंपनियों की भूमिका का विस्तार होने से शहरों के मज़दूरों को खाद्य पदार्थों के लिए ज्यादा क़ीमतें देनी पड़ेंगी। लाखों–लाखों व्यापारियों के धंधे ख़त्म हो जाएंगे क्योंकि व्यापार पर इजारेदार कंपनियों का बोलबाला हो जाएगा। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि इन क़ानूनों के लागू होने से अधिकतम लोगों को नुक़सान होगा, जबकि सिर्फ कुछ मुट्ठीभर अति–धनवान इजारेदार पूंजीपतियों को ही लाभ होगा।

किसान आंदोलन की दूसरी फ़ौरी मांग यह है कि देश के सभी भागों में सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य पर ही सभी कृषि उत्पादों की ख़रीदी की क़ानूनी गारंटी होनी चाहिए और इस न्यूनतम समर्थन मूल्य को लाभकारी होना चाहिए। इस मांग से यह हक़ीक़त स्पष्ट हो जाती है कि हालांकि कई फ़सलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा की जाती है, परंतु अधिकतम किसानों को जब अपने उत्पादों को बेचने के लिए क़ीमत तय करनी पड़ती है तो उन्हें राज्य से कोई ठोस सुरक्षा नहीं मिलती है।

वर्तमान व्यवस्था के चलते, राज्य गेहूं और धान की ख़रीदी की क़ीमतों पर कुछ हद तक न्यूनतम समर्थन मूल्य तय करता है। भारतीय खाद्य निगम सिर्फ इन दो फ़सलों, यानी गेहूं और धान को ही न्यूनतम समर्थन मूल्य पर ख़रीदता है और वह भी देश के कुछ चुनिंदा इलाकों में। किसान यूनियनें यह मांग कर रही हैं कि यह न्यूनतम समर्थन मूल्य जो अब तक कुछ किसानों को और सिर्फ कुछ फ़सलों के लिए ही दिया जाता था, अब इसे सभी किसानों को और सभी कृषि उत्पादों के लिए दिया जाना चाहिए।

किसान आंदोलन की तीसरी फ़ौरी मांग यह है कि प्रस्तावित बिजली संशोधन बिल, जिसका मक़सद है बिजली वितरण को इजारेदार पूंजीपतियों के लिए एक मुनाफ़ेदार धंधा बना देना, उसे वापस लिया जाये। बिजली संशोधन बिल अगर क़ानून बन जाता है तो किसानों को बिजली के लिए बहुत ऊंची क़ीमत देनी पड़ेगी।

ज़मीन को जोतने वाले और हमारे लिए भोजन पैदा करने वाले आज अपनी रोज़ी–रोटी की सुरक्षा के अधिकार की मांग कर रहे हैं। परंतु केंद्र सरकार उन्हें यह अधिकार देने से इंकार कर रही है।

केंद्र सरकार इन तीन केन्द्रीय कृषि क़ानूनों को रद्द करने से इंकार करने पर इतनी अड़ियल क्यों है? कुछ लोग सोचते हैं कि यह, केंद्र सरकार को इस समय चला रही पार्टी, भाजपा की खासियत है। परंतु उनकी यह सोच ग़लत है। केंद्र सरकार के अड़ियल रवैये का असली कारण यह है कि हिन्दोस्तानी और विदेशी इजारेदार पूंजीपति यह हरगिज़ नहीं चाहते कि जिन क़ानूनों को लागू करने के लिए वे इतने समय से, इतनी कोशिश करते आ रहे थे, अब उन्हें लागू करके केंद्र सरकार बिल्कुल भी पीछे हटे।

2020 में तीन केन्द्रीय कृषि क़ानूनों के लागू होने से पहले, एक–एक राज्य के अन्दर कृषि क़ानूनों को सुधारने की एक लम्बी प्रक्रिया चली थी। तीन केन्द्रीय कृषि क़ानूनों का लागू होना इस लंबी प्रक्रिया का अंतिम पड़ाव था। अब जब पूंजीपतियों ने वह हासिल कर लिया है जो उन्हें चाहिए था, तो वे बिल्कुल नहीं चाहते कि केंद्र सरकार इस पर एक क़दम भी पीछे हटे। वे चाहते हैं कि मोदी सरकार किसानों को धोखा देती रहे, गुमराह करती रहे, बांटती रहे और किसी भी तरीक़े से किसानों के एकजुट संघर्ष को ख़त्म कर दे।

जब किसान दिल्ली की सरहदों पर पहुंचे, तो ठीक उसी समय से केंद्र सरकार ने उनके संघर्ष को बदनाम करने की तमाम कोशिशें शुरू कर दी थीं। केंद्र सरकार ने सोशल मीडिया और समाचार प्रसार माध्यमों के ज़रिए तरह–तरह का झूठा प्रचार फैलाया, ढेर सारी झूठी अफ़वाहें फैलायीं।

एक झूठ जो बार–बार बोला जाता है, वह यह है कि पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के धनवान किसान ही इन तीन

कृषि क़ानूनों का विरोध कर रहे हैं। सच तो यह है कि देश के सभी भागों में किसानों को कृषि पर इजारेदार पूंजीपतियों के एजेंडा से ख़तरा है। इसीलिये यह आन्दोलन सभी इलाकों में फैल रहा है।

अनाजों की ख़रीदारी पर विशाल पूंजीवादी निगमों का वर्चस्व न सिर्फ पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों के लिए एक ख़तरा है, जो अब तक भारतीय खाद्य निगम को गेहूं और धान बेचते रहे हैं। दूसरे इलाकों के किसानों के लिए भी, जो अपनी फ़सलों को निजी व्यापारियों को बेचते रहे हैं, उनके लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य एक मापदंड है। अगर न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं होगा तो वे इस मापदंड को भी खो देंगे और उनकी हालत बद से बदतर होती जाएगी।

दूसरी फ़सलों का उत्पादन करने वाले किसानों के लिए हर बुआई के मौसम से पहले सरकार जिन न्यूनतम समर्थन मूल्यों की घोषणा करती है, उनसे उन किसानों को कोई ठोस सुरक्षा नहीं मिलती, क्योंकि उन फ़सलों की सरकारी ख़रीदारी बहुत कम या न के बराबर है। जो किसान दाल, तिलहन, मसाले और दूसरी फ़सलों को उगाते हैं, उनके लिए निजी व्यापारियों व उनके दलालों को बेचने के अलावा कोई और चारा नहीं है और उन्हें अक्सर न्यूनतम समर्थन मूल्य से बहुत कम दाम पर अपनी फ़सलों को बेचना पड़ता है। इसलिए न्यूनतम समर्थन मूल्य पर सभी कृषि उत्पादों की सुनिश्चित ख़रीदारी की मांग सभी किसानों के हित में है।

तो अगर हम किसान आंदोलन की तीन मुख्य मांगों को देखते हैं, हम यह समझेंगे कि यह एक ऐसा मंच है जो सभी इलाकों के किसानों के हितों का प्रतिनिधित्व करता है, उन सभी का

प्रतिनिधित्व करता है, जो कृषि उत्पादन करते हैं और कृषि उत्पादों की बिक्री करते हैं, चाहे उनके पास एक एकड़ की ज़मीन हो या पचास एकड़। पूंजीपतियों के सभी अर्थशास्त्री और पत्रकार, जो इस हक़ीक़त को तोड़–मरोड़ कर पेश करते हैं, किसानों को धोखा देने और किसानों के एकजुट संघर्ष में बंटवारा पैदा करने के हुक्मरान वर्ग के प्रयासों की सेवा में काम कर रहे हैं। एक और बड़ा झूठ जिसे हुक्मरान फैलाते आ रहे हैं, यह है कि किसान आंदोलन में सिख आतंकवादी घुसे हुए हैं। हुक्मरान कभी खालिस्तानियों की बात करते हैं तो कभी–कभी बब्बर खालसा की।

इतिहास हमें यह दिखाता है कि "सिख आतंकवाद" के तथाकथित ख़तरे के बारे में सरकारी प्रचार एक बहुत बड़ा फरेब है, जिसका इस्तेमाल पंजाब और पूरे हिन्दोस्तान के लोगों के ख़िलाफ़ किया गया था। 1980 के दशक के अनुभव से यह साफ़ हो जाता है कि इस तथाकथित ख़तरे के बारे में हव्वा खड़ा करके, पंजाब के लोगों को मज़हब के आधार पर बांटने के लिए एक हथियार बतौर इसका इस्तेमाल किया गया। बाकी हिन्दोस्तान के लोगों को सिखों के ख़िलाफ़ करने के लिए इसका इस्तेमाल किया गया। सभी सिखों को आतंकवादी करार दिया गया। केंद्र सरकार की खुफिया एजेंसियां हिन्दुओं की आतंकवादी हत्याएं आयोजित करती थीं और उनके लिए "सिख आतंकवादियों" को दोषी बताती थीं। आतंकवाद के हव्वे का इस्तेमाल करके, पंजाब, दिल्ली और दूसरी जगहों पर बेरहम राजकीय आतंकवाद को जायज़ ठहराया गया।

किसान आंदोलन के बारे में केंद्र सरकार जो झूठा प्रचार कर रही है और आंदोलन को बांटने के लिए जो तरक़ीबें अपना रही है, वे 1980 के दशक में केंद्र सरकार द्वारा इस्तेमाल किए गए

तौर–तरीक़ों की याद दिलाती हैं। परंतु दिसंबर 2020 के दौरान केंद्र सरकार ने झूठे प्रचार का जो अभियान चलाया था, उससे केंद्र सरकार वह परिणाम हासिल न कर सकी, जो उसे चाहिए था। देशभर में किसानों के लिए लोगों की हमदर्दी और समर्थन दिन–ब–दिन बढ़ता गया। विदेशों में निवासी हिन्दोस्तानियों के बीच में भी किसानों के लिए हमदर्दी और समर्थन बढ़ता गया।

किसान आंदोलन के ख़िलाफ़ लोगों को भड़काने के लिए केंद्र सरकार ने 26 जनवरी, 2021 को गणतंत्र दिवस के अवसर पर एक बड़ी सोची–समझी और पैशाचिक साज़िश रची।

सरकार और सभी टीवी न्यूज़ चैनलों ने गणतंत्र दिवस के अवसर पर हुई अराजकता और हिंसा के लिए किसान ट्रैक्टर रैली के कुछ नौजवान भागीदारों को दोषी ठहराते हुए, सरासर झूठा प्रचार किया। सच यह है कि लाल किले के पास जो हिंसक घटनाएं हुई थीं, उनके लिए केंद्र सरकार और केन्द्रीय गृह मंत्रालय के सीधे कमान के तले काम करने वाली दिल्ली पुलिस ने पहले से ही योजना बना रखी थी।

कई चश्मदीद गवाहों ने इस बात की पुष्टि की है कि ट्रैक्टर रैली के लिए इजाज़त दिए गए रास्तों पर, जगह–जगह बैरिकेड लगाए गए थे। पुलिस ने जानबूझकर कई ट्रेक्टरों को लाल किले की तरफ जाने के लिए रास्ता दिखाया।

आंदोलनकारी किसानों को राष्ट्र सुरक्षा के लिए ख़तरा बताया गया। इस झूठे प्रचार का फ़ायदा उठाकर, किसानों के विरोध स्थलों पर कांटेदार तार के बाड़े लगाए गए, इंटरनेट और पानी की सप्लाई को काट दिया गया और उसे जायज़ ठहराया गया। किसान आंदोलन में

तथाकथित उग्रवादी तत्वों को गिरफ़्तार करने के मनमाने आदेश जारी किए गए। ट्रैक्टर रैली में भाग लेने वाले हजारों–हजारों बेकसूर पुरुषों, महिलाओं और नौजवानों को आज भी पुलिस प्रताड़ित करती रहती है।

इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि आंदोलित किसान दिल्ली की सरहदों तक पहुंच ही नहीं पाते, अगर आन्दोलन के नौजवानों ने अपनी दृढ़ता और जुझारू ताक़त नहीं दर्शायी होती। नौजवान आंदोलन में ताक़त का स्रोत हैं। उन्हें राज्य के जलील प्रचार और उत्पीड़न से लगातार बचाकर रखना चाहिए।

हुक्मरान वर्ग ने बीते कई महीनों से जानबूझकर किसानों की मांगों को लटका कर रखा है। जबकि मीडिया ने लोगों के ध्यान को किसानों की अनसुलझी समस्या पर टिका कर रखा है, तो केंद्र सरकार ने इस दौरान निजीकरण कार्यक्रम को तेज़ी से लागू करना शुरू कर दिया है। केंद्र सरकार ने एयर इंडिया को, उस कंपनी की संपत्तियों की क़ीमत से बहुत कम क़ीमत पर, टाटा के हाथों बेच दिया है। केंद्र सरकार ने विशाल सार्वजनिक ढांचागत संसाधनों को मुद्रीकरण के नाम पर निजी मुनाफ़ाखोरों के हाथों में सौंपने की योजना घोषित की है। इस दौरान कई ऐसे जन–विरोधी और राष्ट्र–विरोधी क़दम लिए गए हैं, जिनमें हिन्दोस्तान और अमरीका के बीच तेज़ी से बढ़ता सैनिक सहयोग भी शामिल है।

हमारे हुक्मरान यह अनुमान लगा रहे हैं कि जैसे–जैसे समय बीतता जाएगा, वैसे–वैसे किसान दिल्ली की सरहदों पर बैठे–बैठे थक जाएंगे। साथ ही साथ, तरह–तरह की हिंसक घटनाओं को आयोजित करके और फिर किसानों को उनके लिए दोषी ठहरा कर, आंदोलनकारी किसानों के ख़िलाफ़ जनता को भड़काया जा

सकेगा। लखीमपुर खीरी में आंदोलनकारी किसानों की हत्या, सिंघु बॉर्डर पर घिनावनी हत्या, हरियाणा सरकार द्वारा किसानों को तितर–बितर करने के लिए जारी की गई धमकियां और इसके साथ–साथ, "सिख उग्रवादियों" के बारे में फिर से प्रचार, इन सबको इस नज़रिए से समझना होगा।

सुप्रीम कोर्ट की एक बेंच ने यह तर्क पेश किया है कि किसानों को आंदोलन करने का अधिकार नहीं है क्योंकि उस मामले पर अदालत में केस चल रहा है। इस तर्क में कोई औचित्य नहीं है। यह भी हुक्मरान वर्ग के हमले का हिस्सा है।

संक्षेप में, हमारी पार्टी का यह मानना है कि किसान आंदोलन पूरी तरह जायज़ है और एक ऐतिहासिक संघर्ष है, जिसके सामने आज कई गंभीर ख़तरे हैं। इस हालत में बहुत ही सतर्क रहना होगा और इस बात पर बहुत गंभीरता से सोचना होगा कि किस तरह आंदोलन को उन ख़तरों से बचाकर आगे बढ़ाया जाएगा।

आंदोलन का मूल्यांकन करते समय हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हमारे देश के किसानों का संघर्ष करने का गौरवपूर्ण इतिहास है, न सिर्फ अपनी रोज़ी–रोटी और अधिकारों के लिए, बल्कि देश की आज़ादी के लिए भी। ब्रिटिश फ़ौज में किसान और किसानों के बेटे 1857 के महान ग़दर में आगे थे। अवैध ब्रिटिश राज के ख़िलाफ़ अनेक हथियारबंद बग़ावतों में किसान और किसानों के बेटे आगे थे।

किसानों का देश में और विदेशों में मज़दूर वर्ग के साथ नजदीकी का संबंध है। किसानों के बेटे–बेटियां शिक्षित हैं। वे ज्यादा से ज्यादा हद तक यह समझने लगे हैं कि उनके संघर्ष का राष्ट्रीय

और अंतर्राष्ट्रीय महत्व है। उनका संघर्ष इजारेदार पूंजीपतियों के ख़िलाफ़ है, जो सारी दुनिया में मज़दूर वर्ग और सभी मेहनतकश लोगों की रोज़ी–रोटी और अधिकारों को ख़तरे में डाल रहे हैं।

किसानों के संघर्ष को मज़दूरों की यूनियनों का पूरा–पूरा समर्थन मिल रहा है। इसी प्रकार, किसान यूनियनें भी निजीकरण के ख़िलाफ़ और मज़दूर–विरोधी लेबर कोड (श्रम संहिताओं) के ख़िलाफ़ मज़दूरों के संघर्ष को पूरा–पूरा समर्थन दे रही हैं।

आज मुख्य चुनौती है पूंजीवादी इजारेदारी घरानों और उदारीकरण व निजीकरण के उनके समाज–विरोधी कार्यक्रम के ख़िलाफ़ मज़दूरों और किसानों का गठबंधन बनाना और उसे मजबूत करना। यह एक चुनौती इसलिए है क्योंकि हमारे हुक्मरान किसानों के एकजुट संघर्ष को बदनाम करने, बांटने और तोड़ने तथा मज़दूर वर्ग के साथ किसानों की एकता को तोड़ने की अपनी कोशिशों को कभी नहीं रोकेंगे। हमारे हुक्मरान सांप्रदायिक और जातिवादी बंटवारा, बैलट और बुलेट, इन सबका इस्तेमाल करके मज़दूरों और किसानों की एकता को उनकी हुकूमत के लिए एक असली ख़तरा बनने से रोकने की पूरी कोशिश करेंगे।

म.ए.ल. : आपने कहा था कि इन कृषि क़ानूनों का लम्बा इतिहास है और इन्हें लागू करके, पूंजीपतियों की लम्बे समय से चली आ रही मांग पूरी की जा रही है। क्या आप इसे और समझा सकते हैं?

लाल सिंह : इन तीन कृषि क़ानूनों का लागू होना आज से लगभग 30 वर्ष पहले शुरू हुई एक लंबी प्रक्रिया का अंतिम पड़ाव है। यह

कृषि उत्पादन और व्यापार से संबंधित नीतियों और क़ानूनों में सुधार लाने की प्रक्रिया है, जिसका मक़सद है हिन्दोस्तानी और विदेशी इजारेदार पूंजीपतियों की लालच को पूरा करना।

1991 में मनमोहन सिंह के बजट भाषण में भूमंडलीकरण और उदारीकरण के कार्यक्रम को पेश किया गया था। उस समय मनमोहन सिंह नरसिम्हा राव की कांग्रेस सरकार के वित्त मंत्री थे। उनके उस भाषण के ज़रिए, हिन्दोस्तान के इजारेदार पूंजीपतियों ने अपना यह फ़ैसला सुनाया कि राज्य द्वारा पूंजीवादी औद्योगिकीकरण, सीमित आयात और सीमित विदेशी पूंजी निवेश और राज्य द्वारा नियंत्रित कृषि उत्पादों के व्यापार के पुराने नीतिगत ढांचे को ख़त्म कर दिया जाएगा।

1990 के दशक में जो सुधार लागू किए गए थे, जिसे सुधारों की पहली लहर कहा जाता है, वे ख़ास तौर पर आयात और निर्यात की नीतियों से संबंधित थे। आयात की मात्रा पर और कस्टम्स ड्यूटी के रेट पर पाबंदियों को हटा दिया गया। यह विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) के नुस्ख़ों के अनुसार किया गया। हिन्दोस्तान के बाज़ार में पाम आयल और तरह–तरह के आयातित खाद्य पदार्थ भारी मात्रा में आने लगे। इसकी वजह से लाखों–लाखों किसानों की रोज़ी–रोटी ख़त्म हो गई। गैट (जी.ए.टी.टी.) और उसके बाद डब्ल्यू.टी.ओ. की शर्तों के साथ सरकार के समझौतों का किसान यूनियनों ने बड़ी संख्या में सड़कों पर निकलकर विरोध किया।

डब्ल्यू.टी.ओ. के ज़रिए अमरीका और दूसरे पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने हिन्दोस्तान की सरकार पर यह दबाव डाला कि गेहूं और

चावल की सरकारी ख़रीदी में कटौती की जाए। वे चाहते थे कि हिन्दोस्तान की सरकार विदेशी इजारेदार कंपनियों के लिए हिन्दोस्तान के बाज़ार में ढेर सारे सस्ते गेहूं और चावल को डंप करने (उतारने) के उचित हालात तैयार करे। सरकार द्वारा ऐसा करने से किसानों में व्यापक तौर पर तबाही फैल गई।

हिन्दोस्तान के पूंजीपति घरेलू कृषि व्यापार के उदारीकरण को कुछ देर तक स्थगित करना चाहते थे, जब तक वे खुद विदेशी कृषि व्यापार कंपनियों के साथ स्पर्धा करने के लायक न बन जाते। उन्होंने किसानों के विरोध का फ़ायदा उठाकर, सरकारी ख़रीदी की व्यवस्था को ख़त्म करने और खाद्य सब्सिडी को कम करने के लिए, और ज्यादा समय दिए जाने का सौदा किया।

21वीं सदी के पहले दशक तक हिन्दोस्तान के इजारेदार पूंजीवादी घराने, 1990 की तुलना में, बहुत अमीर बन चुके थे। उस समय तक उन्होंने दुनिया के कई बाज़ारों में विदेशी इजारेदार कंपनियों के साथ स्पर्धा करना शुरू कर दिया था। हिन्दोस्तान के इजारेदार पूंजीवादी घराने कृषि व्यापार और खाद्य पदार्थों की बिक्री के क्षेत्र में प्रवेश करने लगे थे। अदानी समूह ने 1999 में अदानी–विलमार नामक अपना संयुक्त कारोबार स्थापित किया था। टाटा समूह ने 2003 में स्टार एंटरप्राइज़ को स्थापित किया था। मुकेश अंबानी ने 2006 में रिलायंस रिटेल का उद्घाटन किया था। आदित्य बिरला रिटेल की स्थापना 2007 में हुई थी। ये सारे इजारेदार पूंजीवादी घराने अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों के साथ सौदा करते आ रहे हैं और विशाल सप्लाई चेन पर नियंत्रण पाने की कोशिश करते आ रहे हैं जिनके अंदर घरेलू और विदेशी, थोक और खुदरा व्यापार, दोनों शामिल हैं।

ठीक उसी समय, 21वीं सदी के पहले दशक के दौरान ही हिन्दोस्तान की सरकार ने कृषि उत्पादों के घरेलू व्यापार से संबंधित नीतियों और क़ानूनों को सुधारने के एजेंडा को बढ़ावा देना शुरू कर दिया।

नेहरूवी युग में जो नीतियां, क़ानून, नियम और संस्थान बनाए गए थे, उनके ज़रिए आज़ादी के बाद के शुरुआती वर्षों में पूंजीपति वर्ग के हितों को काफी हद तक पूरा किया गया था। पर अब, जब हिन्दोस्तान के पूंजीपति खुद इतने अमीर हो गए थे और वॉलमार्ट तथा ऐमेज़ॉन जैसी बड़ी–बड़ी कंपनियों के साथ स्पर्धा करने के लायक बन गए थे, तो हिन्दोस्तान के इजारेदार पूंजीपति अब पुराने ढांचे को ख़त्म करना चाहते थे। वे विशाल भंडारण और सप्लाई चेन स्थापित करने में विदेशी इजारेदार कंपनियों के साथ स्पर्धा और सहयोग करना चाहते थे।

केंद्र में एक के बाद दूसरी, जो भी सरकार आई, भाजपा की अगुवाई में और फिर कांग्रेस पार्टी की अगुवाई में, उन सभी ने राज्य सरकारों पर यह दबाव डालना शुरू कर दिया कि उनके ए.पी.एम.सी. (कृषि उत्पाद बाज़ार समिति) अधिनियमों में कुछ खास प्रकार के संशोधन किए जाएं। वाजपेई सरकार के दौरान, एक आदर्श सुधार अधिनियम का मसौदा बनाया गया। मनमोहन सिंह सरकार के दौरान कुछ आदर्श नियमों का मसौदा तैयार किया गया।

इन संशोधनों का एक उद्देश्य था यह सुनिश्चित करना कि खाद्य फ़सलों के निजी थोक ख़रीदारों के लिए, राज्य द्वारा नियंत्रित ए.पी. एम.सी. बाज़ारों के ज़रिए व्यापार करना बाध्यकारी न हो। इनका मक़सद था पूंजीवादी कंपनियों को निजी बाज़ारों को विकसित करने, निजी भंडारण सुविधाओं में निवेश करने और किसी भी किसान से,

किसी भी क़ीमत पर, किसी भी कृषि उत्पाद की ख़रीदारी करने की पूरी छूट देना। एक और मक़सद था अनुबंध खेती को बढ़ावा देना।

1997 से 2007 तक विश्व बैंक ने कई राज्य सरकारों को तकनीकी मदद दी और नीतियों के आधार पर उधार भी दिए। विश्व बैंक के ऐसे एक कार्यक्रम के तहत, नीतीश कुमार की अगुवाई में बिहार की राज्य सरकार ने वहां के ए.पी.एम.सी. अधिनियम को रद्द कर दिया और इस प्रकार बिहार में राज्य द्वारा नियंत्रित बाज़ारों को क्षण भर में ख़त्म कर दिया।

सभी राज्यों को इस कार्यक्रम के अनुसार काम करने को बाध्य करना एक बहुत ही लंबी और मुश्किल प्रक्रिया बन गयी। किसानों द्वारा इसका विरोध किया जा रहा था। इसके अलावा, थोक व्यापारी भी इसका विरोध कर रहे थे क्योंकि उन्हें डर था कि बड़ी–बड़ी इजारेदार कंपनियां उनके व्यापार के धंधे को ख़त्म कर देंगी।

अधिकतम राज्य सरकारों को अपने ए.पी.एम.सी. अधिनियम में संशोधन करने को बाध्य करने के लिए लगभग 20 साल लग गए हैं। अभी भी सभी राज्य सरकारों ने इसमें समान रूप से संशोधन नहीं किए हैं और कुछ राज्य अभी भी बचे हैं जिनमें कोई संशोधन नहीं किया गया है।

हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय इजारेदार कंपनियां इस प्रक्रिया में हो रही देर को देखते हुए, बहुत ही बेसब्र हो रही थीं। उन्होंने फ़ैसला किया कि उनके उद्देश्य को फ़ौरन हासिल करने के लिए एक ही पक्का तरीक़ा है, और वह है कृषि व्यापार में केंद्रीय क़ानून लागू करना, जो सभी राज्यों के क़ानूनों से सर्वोपरि होंगे। 2020 में इस फ़ैसले को लागू किया गया। मोदी सरकार ने कोरोना वायरस के कारण लगाए गए

लॉकडाउन की हालतों का फ़ायदा उठाकर, इन केंद्रीय क़ानूनों को लागू कर दिया। इजारेदार पूंजीवादी कंपनियों को अब वह परिणाम मिल गया है जिसके लिए वे इतने वर्षों तक कोशिश कर रही थीं। अब ये कंपनियां राज्य की सीमाओं से बाधित न होकर, पूरे हिन्दोस्तान के बाज़ार में अपना वर्चस्व जमा सकेंगी और लूट कर सकेंगी।

तो आप समझ रहे हैं साथी, कि इन क़ानूनों के लागू होने से, हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय इजारेदार पूंजीपतियों ने कृषि व्यापार और भंडारण के क्षेत्र में अब उन सारे सुधारों को हासिल कर लिया है, जिनका उन्हें इतने सालों से इंतज़ार था।

म.ए.ल. : आपने कहा कि हिन्दोस्तान के पूंजीपति नेहरू के जमाने के पुराने नीतिगत ढांचे को ख़त्म करते आ रहे हैं। उस पुराने ढांचे को तब क्यों अपनाया गया था और अब उसे ख़त्म क्यों किया जा रहा है?

लाल सिंह : यह बहुत अहम सवाल है, कामरेड। हमें यह समझना होगा कि क्यों हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय पूंजीपतियों ने 1950 के दशक में एक खास प्रकार के नीतिगत ढांचे को अपनाया था और 1990 से उदारीकरण और निजीकरण के झंडे के तले उस ढांचे को क्यों ख़त्म करते आ रहे हैं।

हमारे देश में आज़ादी के ठीक बाद जो नीतिगत ढांचा अपनाया गया था, वह उस समय की आर्थिक और राजनीतिक हालतों के अनुकूल था। टाटा, बिरला और दूसरे बड़े औद्योगिक घराने, बड़े जागीरदारों और लोगों के दूसरे उत्पीड़कों के साथ गठबंधन बनाकर, एक विशाल देश के हुक्मरान बन गए थे। वे एशिया में

एक बहुत बड़ी औद्योगिक और सैनिक ताक़त बनने का सपना देख रहे थे। परंतु उनके पास मशीन निर्माण उद्योग या पर्याप्त मात्रा में इस्पात और बिजली नहीं थी। उनकी अपनी पूंजी उन आवश्यक विशाल निवेशों के लिए पर्याप्त नहीं थी। उन हालातों में उन्होंने फ़ैसला किया कि जनता के धन का इस्तेमाल करके भारी उद्योग और ढांचागत साधनों के लिए राजकीय क्षेत्र का निर्माण किया जाएगा। उन्होंने फ़ैसला किया कि मोटर गाड़ियों और बहुत से विनिर्मित उपभोग की सामग्रियों के आयात पर पाबंदियां लगाई जाएंगी, ताकि वे खुद इन बाज़ारों पर हावी हो सकें और ज्यादा से ज्यादा मुनाफ़े कमा सकें।

इस पूरे ढांचे का विस्तारपूर्वक वर्णन बॉम्बे प्लान में दिया गया था। बॉम्बे प्लान पूंजीपतियों के उस समय के नज़रिए का दस्तावेज़ था जिसे 1944–45 में प्रकाशित किया गया था और जिसे जे.आर.डी. टाटा और घनश्याम दास बिरला की अगुवाई में, औद्योगिक घरानों के प्रतिनिधियों के एक समूह ने तैयार किया था। इस दस्तावेज़ की अंग्रेज वायसराय ने पुष्टि की थी और उसके बाद इसका प्रकाशन किया गया था।

हिन्दोस्तान की आज़ादी ऐसे समय पर प्राप्त हुई थी, जब सारी दुनिया में क्रांति की लहर तेज़ी से आगे बढ़ रही थी। समाजवादी सोवियत संघ के लिए उस समय दुनियाभर में बहुत ज्यादा सम्मान था। दूसरे विश्व युद्ध के अंत में समाजवादी राज्यों की एक बहुत बड़ी छावनी स्थापित हुयी थी। ब्रिटेन, फ्रांस और दूसरे यूरोपीय देशों के पूंजीपति हुक्मरान वर्ग सोशल–डेमोक्रेटिक पार्टियों और समाज कल्याण के कार्यक्रमों पर निर्भर हो रहे थे, जिनके ज़रिए वे मज़दूर वर्ग को शांत करने और क्रांति को रोकने की कोशिश कर रहे थे।

हिन्दोस्तान की मेहनतकश बहुसंख्या समाजवाद चाहती थी। हिन्दोस्तान के पूंजीपतियों, जागीरदारों और उनके साथ–साथ, बरतानवी–अमरीकी साम्राज्यवादियों को बहुत डर था कि हिन्दोस्तान के मज़दूर और किसान क्रांति ले आएंगे। उन्होंने प्रधानमंत्री नेहरू को, हिन्दोस्तानी पूंजीवाद को विकसित करने की अपनी योजना को, लोगों के सामने "समाजवादी नमूने का समाज" बनाने की योजना के रूप में पेश करने की ज़िम्मेदारी दी।

1951 से 1965 तक की अवधि की पहली तीन पंचवर्षीय योजनाएं बॉम्बे प्लान के आधार पर बनाई गई थी। टाटा, बिरला और दूसरे औद्योगिक घरानों ने काफी दौलत जमा कर ली थी और विनिर्मित उपभोग की सामग्रियों के घरेलू बाज़ार में प्रभावशाली हिस्सा हासिल कर लिया था। राजकीय क्षेत्र से उन्हें ढांचागत साधनों और इस्पात, कोयला, बिजली, आदि की सुनिश्चित सप्लाई मिलती थी, जिसका उन्होंने खूब फ़ायदा उठाया।

1960 के दशक के बीच तक हिन्दोस्तान में गंभीर अकाल की स्थिति हो गई। शहरों में भोजन के लिए दंगे–फसाद होने लगे। हिन्दोस्तान की सरकार को इस हालत का सामना करने के लिए अमरीका से खाद्य सहायता पर निर्भर होना पड़ा। इस परिस्थिति में, हिन्दोस्तान के हुक्मरान वर्ग ने फ़ैसला किया कि गेहूं और धान की उत्पादकता को बढ़ाना और केंद्र सरकार के नियंत्रण में, इन दोनों मुख्य अनाजों का एक अतिरिक्त भंडार तैयार करना बहुत आवश्यक है। तथाकथित हरित क्रांति को इस उद्देश्य के साथ शुरू किया गया था। ऊंची उत्पादकता वाले बीज, रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक और किसानों को बैंक से उधार – इन सबके लिए व्यवस्थाएं बनाई गईं। भारतीय खाद्य निगम की स्थापना की

गई, ताकि राज्य द्वारा गेहूं और चावल की ख़रीदारी की जा सके, उनका भंडारण किया जा सके और शहरों में राशन की दुकानों के ज़रिए, एक सार्वजनिक वितरण व्यवस्था स्थापित करके, इनका वितरण भी किया जा सके।

हरित क्रांति की वजह से पूंजीवाद का बहु–तरफा विकास हुआ। बाज़ार में बिकने वाली फ़सलों का विस्तार हुआ, कृषि में पूंजीवादी तौर–तरीक़ों का विस्तार हुआ, जिसकी वजह से पूंजीवादी उद्योग के लिए घरेलू बाज़ार में विस्तार हुआ। ग्रामीण घरेलू बचत से बैंकिंग व्यवस्था के ज़रिए संग्रहीत होने की वजह से, इजारेदार औद्योगिक घरानों के लिए वित्त पूंजी का भण्डार भी उत्पन्न हुआ।

हरित क्रांति की वजह से, शुरुआती वर्षों में कृषि से कुल आमदनी बढ़ गई। मिसाल के तौर पर, 1971 में पंजाब में, गेहूं की ख़रीदारी की क़ीमत उसके उत्पादन के औसतन लागत से 25 प्रतिशत ज्यादा थी। लेकिन ऐसी हालतें ज्यादा देर तक नहीं रहीं। किसानों को लागत की वस्तुओं के लिए जो दाम देने पड़ रहे थे, वे दाम उत्पादों की बिक्री से प्राप्त होने वाली क़ीमतों से कहीं ज्यादा तेज़ी से बढ़ने लगे। 1976 तक, पंजाब में गेहूं की ख़रीदारी की क़ीमत उसके उत्पादन के औसतन लागत से मात्र 5 प्रतिशत ही ज्यादा रही।

कृषि में पूंजीवादी उत्पादन और निम्न–सामग्रियों के उत्पादन के विकास की वजह से, किसानों और उनकी मुख्य मांगों का चरित्र बहुत प्रभावित हुआ। आज़ादी के बाद के शुरुआती वर्षों में, किसानों का संघर्ष भूमि की मालिकी की मांग पर केन्द्रित था। उस समय किसानों का संघर्ष बड़े जागीरदारों द्वारा सामंती और जातिवादी दमन के ख़िलाफ़ था। 1980 के दशक तक, देशभर में किसान

बिजली और पानी की क़ीमतों की वृद्धि के ख़िलाफ़ संघर्ष कर रहे थे और अपनी फ़सलों के लिए लाभकारी दाम की मांग कर रहे थे।

1980 का दशक वह दशक था जब ब्रिटेन और अमरीका में तथाकथित मुक्त बाज़ार के सुधारों को शुरू किया गया था। गोर्बाचोव ने ग्लास्नोस्त और पेरेस्त्रोइका के नाम पर, सोवियत संघ में पूंजीवादी सुधारों को शुरू किया था, जो कि उदारीकरण और निजीकरण का रूसी रूप था। हिन्दोस्तान को विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से बहुत दबाव का सामना करना पड़ा, कि वह अपने घरेलू बाज़ार को आयात और विदेशी पूंजीनिवेश के लिए खोल दे। हिन्दोस्तान की सरकार ने इस दबाव के तले, उस पूरे दशक के दौरान क्रमशः आयात शुल्क को कम किया और रुपए का अवमूल्यन किया।

1990 के दशक की शुरुआत दुनियाभर में आकस्मिक परिवर्तनों के साथ हुई। 1991 में सोवियत संघ का विघटन हो गया। अमरीका ने दुनिया के सभी पूंजीपतियों की अगुवाई करते हुए, मज़दूर वर्ग, महिलाओं और मेहनतकश लोगों द्वारा बीसवीं सदी के दौरान अपने संघर्षों से जीते गए सारे अधिकारों के ख़िलाफ़ और समाजवाद की अवधारणा के ख़िलाफ़ एक अप्रत्याशित हमला शुरू कर दिया।

पूंजीपतियों के विचारकों ने ऐलान कर दिया कि कम्युनिज्म ख़त्म हो गया है। उन्होंने ऐलान कर दिया कि बाज़ार–उन्मुख अर्थव्यवस्था और बहुपार्टीवादी प्रतिनिधित्ववादी लोकतंत्र का कोई विकल्प नहीं है। मुक्त बाज़ार सुधारों के नाम पर, उन्होंने सभी स्वतंत्र राज्यों पर यह दबाव डालना शुरू किया कि वे अपने बाज़ार दुनिया की इजारेदार पूंजीवादी कंपनियों के लिए खोल दें।

उत्तरी अमरीका, पश्चिमी यूरोप और जापान के इजारेदार पूंजीपति सक्रियता से भूतपूर्व सोवियत खेमे के अंदर के बाज़ारों में घुसने के तौर–तरीक़े तलाशने लगे। हिन्दोस्तान की उपजाऊ भूमि, मेहनतकश लोगों, अनमोल प्राकृतिक संसाधनों और खाद्य व अन्य सामग्रियों के विशाल घरेलू बाज़ार पर भी उन सब की लालची नज़रें थीं।

बीती अवधि में हिन्दोस्तान के पूंजीपति अमरीकी साम्राज्यवादी दबाव का मुक़ाबला करने के लिए, सोवियत संघ के साथ निकट संबंध बनाने की धमकी दिया करते थे। अब उस तरह के दांवपेच करने की गुंजाईश नहीं रही। हिन्दोस्तान के पूंजीपतियों को इस नई हालत में नए तरीक़े ढूंढने पड़े।

1991 से शुरू होकर, हिन्दोस्तान के हुक्मरान वर्ग ने समाजवादी नमूने के समाज को बनाने के दिखावे को खुल्लम–खुल्ला त्याग दिया और उदारीकरण व निजीकरण के ज़रिए भूमंडलीकरण के नुस्खों को अपना लिया।

विदेशी स्पर्धा को सीमित रखकर, हिन्दोस्तान के इजारेदार पूंजीवादी घरानों ने अपना औद्योगिक आधार बना लिया था। उन्होंने फ़ैसला किया कि अब विदेशों में खुद स्पर्धा करने के क़ाबिल होने के लिए, उन पाबंदियों को हटाने का समय आ गया था। वे चाहते थे कि हिन्दोस्तान की सरकार घरेलू बाज़ार को विदेशी पूंजीनिवेश के लिए खोल दे और विदेशी सरकारें अपने बाज़ार हिन्दोस्तानी पूंजीनिवेश के लिए खोल दें। सार्वजनिक क्षेत्र का फ़ायदा उठाकर, उन्होंने अपने निजी साम्राज्यों का निर्माण कर लिया था। तब इजारेदार पूंजीवादी घरानों ने फ़ैसला किया कि समय

आ गया है कि सार्वजनिक संपत्तियों को सस्ते दाम पर हड़प लिया जाए, ताकि उनके निजी साम्राज्यों का और विस्तार किया जा सके।

उदारीकरण और निजीकरण के कार्यक्रम के लागू होने से मज़दूरों का शोषण खूब बढ़ गया और छोटे उत्पादकों की असुरक्षा भी बहुत बढ़ गई। किसानों का कर्ज़ भार बहुत बढ़ गया और हर साल हजारों–हजारों किसान खुदकुशी करने लगे। अर्थव्यवस्था के लगभग सभी क्षेत्रों में इजारेदारी और विदेशी पूंजी की भूमिका खूब बढ़ गयी है।

1990 के दशक से जो रास्ता अपनाया गया है, उससे न सिर्फ मज़दूरों और किसानों की समस्याएं और तीव्र हुई हैं, बल्कि पूंजीपति वर्ग के अंदर आपसी अंतर्विरोध भी और तीव्र हुए हैं। कई ऐसे संपत्तिवान और विशेष अधिकार वाले तबके हैं, जिनके लिए पुराना ढांचा कुछ हद तक हितकारी हुआ करता था। अब उन्हें अपने हाल पर छोड़ दिया गया है।

साम्राज्यवादी सुधार कार्यक्रम के ख़िलाफ़ मज़दूरों और किसानों के संघर्ष को, और साथ ही साथ, विभिन्न संपत्तिवान तबकों के विरोध को भी गुमराह करने, बांटने और कुचलने के लिए, इजारेदार पूंजीवादी घरानों और उनकी विश्वसनीय पार्टियों ने बड़े पैशाचिक और भयानक तौर तरीक़े अपनाए। उन्होंने मंदिर और मंडल के नाम पर आंदोलन शुरू कर दिए। उन्होंने बाबरी मस्जिद का विध्वंस आयोजित किया। उन्होंने गुजरात में जनसंहार करवाया और सांप्रदायिक हिंसा तथा राजकीय आतंकवाद के तरह–तरह के कांड करवाए, ताकि लोगों के संघर्षों को खून में बहा दिया जाए।

सांप्रदायिक हिंसा और राजकीय आतंकवाद का प्रयोग करने के साथ–साथ, इजारेदार पूंजीवादी घरानों ने कुछ नए नेताओं को भी

तैयार किया है, जो पुराने नेताओं की जगह ले सकते हैं। पुराने नेता समाजवादी नमूने के समाज की हिफ़ाज़त करने में प्रशिक्षित हुआ करते थे। अब इजारेदार पूंजीवादी घराने ऐसे नेताओं को बढ़ावा दे रहे हैं, जो कहते हैं कि सबके विकास के लिए इजारेदार पूंजीवादी कंपनियों की अगुवाई में तेज़ी से पूंजीवादी विकास करना और हिन्दोस्तान को एक साम्राज्यवादी ताक़त बनने के रास्ते पर ले जाना ही बेहतरीन रास्ता है। उन्होंने भाजपा को एक ऐसी पार्टी के रूप में तैयार किया है जो हिंदू अस्मिता की पुनर्स्थापना करने के नाम पर, पूंजीवादी घरानों के हमलावर साम्राज्यवादी रास्ते को बहुत अच्छी तरह से लागू कर सकेगी।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 1990 के दशक से, नीतिगत ढांचे में जो परिवर्तन किया गया है, वह विश्वव्यापी धारा का एक हिस्सा है। यह वर्तमान अवधि में साम्राज्यवादी हमले का हिस्सा है और यह मेहनतकश लोगों, समाजवाद और मानव अधिकारों व जनवादी अधिकारों के क्षेत्र में मानव जाति की ढेर सारी उपलब्धियों पर हमला है। यह एक समाज–विरोधी कार्यक्रम है, जिसे दुनियाभर के इजारेदार पूंजीपति और साम्राज्यवादी ताक़तें लागू कर रही हैं।

म.ए.ल. : कुछ पार्टियां यह कह रही हैं कि किसान आन्दोलन का फ़ौरी उद्देश्य आगामी चुनावों में भाजपा को हराने का होना चाहिए। इसके बारे में आपका क्या विचार है?

लाल सिंह : क्या भाजपा ही एकमात्र एक ऐसी पार्टी है जो कृषि व्यापार के उदारीकरण के एजेंडा को लागू कर रही है? नहीं। हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय इजारेदार पूंजीपति ही वे असली ताक़त हैं, जो इस एजेंडे को लागू करना चाहते हैं। भाजपा को

इस समय सरकार चलाने और इजारेदार पूंजीपतियों द्वारा तय किये गए एजेंडे को लागू करने का काम सौंपा गया है।

इजारेदार पूंजीवादी घराने पूंजीपति वर्ग की अगुवाई करते हैं। वे ही इन तीन केंद्रीय क़ानूनों को लागू करने पर ज़ोर दे रहे हैं, जिनके ज़रिए कृषि पर इजारेदार कॉर्पोरेट घरानों का पूरा वर्चस्व हो जाएगा। ये इजारेदार पूंजीवादी घराने ही सभी सार्वजनिक संसाधनों के निजीकरण को भी बढ़ावा दे रहे हैं और चार श्रम संहिताओं या लेबर कोड को भी बढ़ावा दे रहे हैं, जिनके ज़रिए मज़दूर वर्ग का और तीव्र शोषण हो सकेगा।

150 से कम इजारेदार पूंजीवादी घराने आज 140 करोड़ की आबादी वाले इस देश के एजेंडा को तय कर रहे हैं। इतने थोड़े से लोग कैसे इस विशाल बहुसंख्या पर अपनी हुकूमत को बरकरार रखते हैं? वे अफ़सरशाही की एक मशीनरी के ज़रिए और हथियारबंद सिपाहियों व पुलिस के सहारे अपनी हुकूमत को बरकरार रखते हैं। इन हथियारबंद सिपाहियों और पुलिस को शोषित और दबे–कुचले लोगों पर बल प्रयोग करने की ट्रेनिंग दी गई है। इजारेदार पूंजीवादी घराने केंद्र सरकार को चलाने की ताक़त को अपनी किसी भरोसेमंद पार्टी के हाथों में सौंप कर अपनी हुकूमत को बरकरार रखते हैं।

सत्ताधारी वर्ग और सरकार चलाने वाली पार्टी – इन दोनों के बीच में संबंध किसी कंपनी के मालिक और मैनेजर के बीच में संबंध के जैसा है। मैनेजर को वह सब कुछ लागू करना पड़ता है जो मालिक कहते हैं। अगर मैनेजर उसे लागू नहीं करते हैं तो मालिक उनको हटाकर नया मैनेजमेंट ला सकते हैं।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था के अंदर, पूंजीपति वर्ग की हुकूमत को बरकरार रखने के लिए, सरकार चलाने वाली पार्टी और विपक्ष की पार्टी, दोनों की अपनी–अपनी ख़ास भूमिकाएं होती हैं। सरकार में बैठी पार्टी की भूमिका होती है इजारेदार पूंजीपति वर्ग के एजेंडे को लागू करना और साथ ही साथ, लोगों को बुद्धू बनाना और यह झांसा देना कि जो कुछ हो रहा है वह लोगों के हित में ही हो रहा है। संसद में विपक्षी पार्टियों की भूमिका होती है कि सरकार जो भी करती है, उसके ख़िलाफ़ खूब शोर मचाना। उनका उद्देश्य होता है यह धारणा पैदा करना कि विपक्षी पार्टियां मेहनतकश बहुसंख्या के हितों की बात कर रही हैं। और वे उस दिन का इंतजार करती हैं जब वे खुद सरकार में होंगी।

देखिए आज कांग्रेस पार्टी किस तरह बात कर रही है। सोनिया गांधी पिछले साल लागू किए गए तीन कृषि क़ानूनों को रद्द करने की मांग कर रही हैं। लेकिन मनमोहन सिंह सरकार के 10 सालों के दौरान कांग्रेस पार्टी उदारीकरण और निजीकरण के इसी एजेंडे को बढ़ावा दे रही थी। और उन सालों के दौरान, भाजपा कृषि व्यापार में उदारीकरण का विरोध कर रही थी और दावा कर रही थी कि यह किसानों और छोटे व्यापारियों के हितों के ख़िलाफ़ है।

भाजपा और कांग्रेस पार्टी, दोनों को यह मालूम है कि जब–जब उनको सरकार चलाने का मौका मिलेगा, तब–तब उन्हें इजारेदार पूंजीवादी घरानों द्वारा तय किए गए एजेंडे को ही लागू करना होगा। जब वे विपक्ष में होती हैं तो उन्हें दबे–कुचले लोगों के समर्थन में बोलने का नाटक करना पड़ता है। यही तथाकथित संसदीय मर्यादा का असली सार है, जिसकी वे सभी कसम खाती हैं।

सरकार चलाने वाली पार्टी को सभी समस्याओं की जड़ बताने का मतलब है लोगों से इस सच्चाई को छुपाना। इससे यह ख़तरनाक भ्रम पैदा किया जाता है कि अगर किसी एक खास पार्टी को सरकार से हटाया जाए तो लोगों की समस्याएं ख़त्म हो जाएंगी। ऐसा प्रचार करने का मतलब है लोगों को पूंजीपति हुक्मरान वर्ग की इस या उस वफादार पार्टी के पीछे लामबंध करना।

इसलिए आपके सवाल का जवाब यह है कि ऐसा सोचना बहुत ग़लत और ख़तरनाक है, कि विधानसभा और लोकसभा चुनावों में भाजपा को हराने से किसानों का उद्देश्य पूरा होगा।

कृषि व्यापार के उदारीकरण का लंबा इतिहास यह साफ–साफ दिखाता है कि इजारेदार पूंजीपति ही देश के लिए एजेंडा को तय कर रहे हैं। मज़दूरों और किसानों का संघर्ष सिर्फ भाजपा के ख़िलाफ़ नहीं है। हमारा असली दुश्मन पूंजीपति वर्ग है जिसकी अगुवाई इजारेदार पूंजीवादी घराने कर रहे हैं।

हमारा फ़ौरी काम है अपने सांझे दुश्मन के ख़िलाफ़ अपनी जुझारू एकता की हिफ़ाज़त करना तथा इसे और मजबूत करना। उदारीकरण और निजीकरण के कार्यक्रम का वैकल्पिक कार्यक्रम है लोगों को सत्ता में लाना और अर्थव्यवस्था को नयी दिशा दिलाना – लोगों की ज़रूरतों को पूरा करने की दिशा, न कि पूंजीपतियों की लालच को पूरा करने की। हमें इस वैकल्पिक कार्यक्रम के इर्द–गिर्द मज़दूरों और किसानों की एकता को बनाना और मजबूत करना होगा।

इतिहास हमें दिखाता है कि जब–जब मज़दूरों और किसानों का विरोध बहुत बढ़ जाता है, तब–तब संसदीय विपक्ष की

पार्टियां लोगों के असंतोष को उन दायरों के अंदर सीमित रखने का काम करती हैं, जो हुक्मरान वर्ग को मंज़ूर हों। ये पार्टियां प्रेशर कुकर के सेफ्टी वाल्व का काम करती हैं। इस समय यह ख़तरा उन तत्वों के रूप में मौजूद है, जो सिर्फ भाजपा को बदलकर एक वैकल्पिक मैनेजमेंट टीम को सरकार में बिठाना चाहते हैं।

म.ए.ल. : क्या आप समझा सकते हैं कि संसद में विपक्षी पार्टियां किस तरह से सेफ्टी वाल्व की भूमिका अदा करती हैं?

लाल सिंह : जैसा कि आप जानते हैं, प्रेशर कुकर के अन्दर जब भाप का दबाव बहुत ज्यादा बढ़ जाता है तो सेफ्टी वाल्व खुल जाता है और भाप निकल जाती है। यह प्रेशर कुकर को फटने से बचाने के लिए होता है।

जब कांग्रेस पार्टी की स्थापना 1885 में हुई थी, तो उस समय अंग्रेज हुक्मरानों ने उसे एक सेफ्टी वाल्व जैसा माना था। अंग्रेज हुक्मरानों को यह डर था कि इस उपमहाद्वीप के सभी लोग एकजुट होकर फिर से बग़ावत करेंगे, जैसा कि उन्होंने 1857 में किया था। अंग्रेज हुक्मरानों ने कांग्रेस पार्टी पर भरोसा किया कि वह लोगों को इंक़लाब के रास्ते से दूर ले जाएगी।

कांग्रेस पार्टी के नेता पूंजीपतियों और जागीरदारों के प्रतिनिधि थे जो अंग्रेजों की शोषण और दमन की व्यवस्था को बरकरार रखना चाहते थे और उसके अंदर अपने रुतबे को और बढ़ाना चाहते थे। अंग्रेज हुक्मरानों ने प्रादेशिक विधानसभाओं में हिन्दोस्तानियों को चुनने की एक प्रक्रिया स्थापित की थी ताकि कांग्रेस पार्टी के

नेताओं को निर्वाचित निकायों के अंदर शामिल किया जा सके और वहां पर वे देशभक्ति के भाषण दे सकें।

सेफ्टी वाल्व की भूमिका एक बहुत ही अहम भूमिका है, जो वर्तमान व्यवस्था के अंदर संसद में विपक्ष की पार्टियां निभाती हैं। वे खुद को शोषित और दबे–कुचले बहु–संख्या के समर्थक के रूप में पेश करती हैं, ताकि लोगों के संघर्षों के साथ दांवपेच कर सकें और जन संघर्षों को व्यवस्था के लिए एक ख़तरा बनने से रोक सकें।

इतिहास हमें इसके बहुत सारे उदाहरण देता है, कि किस तरह हुक्मरान वर्ग ने मज़दूरों और किसानों के संघर्षों के साथ दांवपेच किया है। एक ऐसा उदाहरण है, कि किस तरह 1975–77 की एमरजेंसी (आपातकाल) की सरकार के दौरान हुक्मरान वर्ग ने लोगों के संघर्षों के साथ दांवपेच किया था।

26 जून, 1975 को इंदिरा गांधी की अगुवाई में कांग्रेस पार्टी की सरकार ने राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा की थी। क्षण भर में मज़दूरों, किसानों और बहुसंख्यक लोगों के सभी जनवादी अधिकारों और नागरिक आज़ादियों को छीन लिया गया था।

वह ऐसा समय था जब मज़दूरों और किसानों के जन संघर्ष एक चरम सीमा तक पहुंच चुके थे। 1974 में लाखों–लाखों रेल मज़दूर अनिश्चितकालीन हड़ताल पर चले गए थे, जिसकी वजह से पूरी अर्थव्यवस्था ठप्प हो गयी थी। देशभर में छात्र बड़ी संख्या में निकलकर विरोध संघर्ष कर रहे थे। 1969 में स्थापित

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी–लेनिनवादी) के आह्वान पर, लाखों–लाखों नौजवान वर्तमान व्यवस्था का तख्तापलट करने और उसकी जगह पर एक लोक जनवादी राज्य स्थापित करने के लिए निकल पड़े थे। उस क्रांतिकारी आह्वान का असर न सिर्फ देश के अंदर बल्कि विदेशों में हिन्दोस्तानी मज़दूरों और छात्रों के बीच में भी फैल रहा था।

आपातकाल की घोषणा के पीछे मुख्य मक़सद था क्रांति के ख़तरे को रोकना। राष्ट्रीय सुरक्षा की हिफ़ाज़त करने के नाम पर, मज़दूरों, किसानों, सभी क्रांतिकारियों और सरकार की आलोचना करने वाले सभी लोगों के ख़िलाफ़ व्यापक पैमाने पर दमन शुरू कर दिया गया।

जैसे–जैसे आपातकाल की सरकार के ख़िलाफ़ लोगों का विरोध बढ़ता गया, वैसे–वैसे संसद की विपक्षी पार्टियों ने कांग्रेस पार्टी को हराने और "लोकतंत्र की पुनः स्थापना" करने के लिए एक आंदोलन शुरू किया।

केंद्र सरकार ने व्यापक स्तर पर ट्रेड यूनियन नेताओं और कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों को गिरफ़्तार करने के अलावा, संसदीय विपक्ष के कई जाने–माने नेताओं को भी गिरफ़्तार किया। इनमें शामिल थे जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटल बिहारी वाजपेई, चरण सिंह, लालकृष्ण आडवाणी, जॉर्ज फर्नांडिस, लालू प्रसाद यादव और मुलायम सिंह यादव। इन नेताओं को गिरफ़्तार करके, इन्हें जनता के 'हीरो' के रूप में पेश किया गया, जो सभी लोगों के जनवादी अधिकारों के लिए तथाकथित संघर्ष कर रहे थे।

लोकतंत्र की पुनः स्थापना के उस तथाकथित आंदोलन का क्या नतीजा निकला? पूंजीपतियों ने कांग्रेस पार्टी की सरकार की जगह पर जनता पार्टी की सरकार को स्थापित किया और अपनी हुक्मशाही को जारी रखा। क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए संघर्ष को टाल दिया गया।

कई ऐसे राजनीतिक नेता, जिन्हें आपातकाल के दौरान लोकतंत्र के रक्षक के रूप में पेश किया गया था, वे आगे चलकर मुख्यमंत्री बन गए। कुछ देश के प्रधानमंत्री भी बन गए। उनमें से एक तबका था जिसने भाजपा की स्थापना की, और 1960 के दशक में हुक्मरान वर्ग में भाजपा को कांग्रेस पार्टी के मुख्य विपक्ष के रूप में तैयार किया।

आपातकाल की घोषणा करना और लोकतंत्र की पुनः स्थापना के आंदोलन को चलाना – ये दोनों ही इजारेदार पूंजीवादी घरानों की अगुवाई में पूंजीपति वर्ग की योजना के हिस्से थे। इन दोनों के ज़रिए लोगों को संघर्ष के रास्ते से हटा दिया गया और लोगों की एकता को बांटा गया। इस प्रकार से क्रांति को रोका गया तथा वर्तमान व्यवस्था को बरकरार रखा गया। इन दोनों ने हुक्मरान वर्ग को कांग्रेस पार्टी का एक सशक्त विकल्प बनाने की योजना में मदद की।

1975–77 की अवधि के क्रांतिकारी संकट पर काबू पाने में एक कारक, जो पूंजीपतियों के लिए बहुत मददगार था, वह था कम्युनिस्ट आंदोलन की बंटी हुई स्थिति और पूंजीवादी विचारधारा व राजनीति के साथ कम्युनिस्ट आन्दोलन की कई

पार्टियों का समझौता करना। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा) ने कांग्रेस पार्टी और आपातकाल को दाएं पंथी प्रतिक्रिया के ख़िलाफ़ संघर्ष के रूप में उचित ठहराये जाने का समर्थन किया था। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी), (माकपा) लोकतंत्र की पुनः स्थापना करने के नाम पर, संसदीय विपक्ष के साथ जुड़ गयी थी।

इस पूरे अनुभव से एक अहम सबक यह है कि हुक्मरान वर्ग सरकार चलाने वाली पार्टी और संसद में एक या अनेक विपक्षी पार्टियों, दोनों के सहारे शासन करता है। हुक्मरान वर्ग मज़दूरों और किसानों के संगठनों के अंदर अपने दलालों का पोषण करता है, जो लोकतंत्र की वर्तमान व्यवस्था के बारे में ढेर सारे भ्रम पैदा करते हैं। हुक्मरान वर्ग अपनी हुकूमत को बरकरार रखने के लिए हमेशा ही सरकार चलाने वाली पार्टी का कोई सशक्त विकल्प तैयार करता है, जो सही समय आने पर उसकी जगह लेने को तैयार हो।

हमें याद रखना होगा कि 2004 में क्या हुआ था। हुक्मरान वर्ग द्वारा आयोजित ढेर सारे सांप्रदायिक क़त्लेआम और दूसरी पैशाचिक हरक़तों के बावजूद, उदारीकरण और निजीकरण के ख़िलाफ़ मज़दूरों और किसानों का विरोध चरम सीमा तक पहुंच गया था। उस समय हुक्मरान वर्ग 14वीं लोकसभा के चुनाव के ज़रिए, वाजपेई की भाजपा सरकार की जगह पर मनमोहन सिंह की कांग्रेस सरकार को ले आये थे। 'इंडिया शाइनिंग' के नारे की जगह पर, 'मानवीय चेहरे के साथ सुधार' का नारा दिया जाने लगा।

2004 के बाद की सारी गतिविधियां इस सच्चाई को साफ–साफ दर्शाती हैं कि इजारेदार पूंजीपतियों का कार्यक्रम अपने स्वाभाव से ही मज़दूर–विरोधी और किसान–विरोधी है। यह कार्यक्रम राष्ट्र–विरोधी है और समाज के आम हितों के ख़िलाफ़ है। उदारीकरण और निजीकरण के मानव–विरोधी कार्यक्रम को मानवीय सूरत नहीं दी जा सकती है।

इस समय हिन्दोस्तानी और अंतर्राष्ट्रीय इजारेदार पूंजीपति भाजपा पर निर्भर कर रहे हैं कि वह कोविड–19 का फ़ायदा उठाकर, उनके जन–विरोधी एजेंडा को बढ़ावा देती रहेगी। साथ ही साथ, इजारेदार पूंजीपति यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि वर्तमान सरकार द्वारा लिए गए क़दमों के ख़िलाफ़ मज़दूरों और किसानों का जन–विरोध बढ़ता जा रहा है। वे उस समय की तैयारी करना चाहते हैं, जब भाजपा मेहनतकश जनसमुदाय को और बुद्धू नहीं बना पाएगी। वे नरेंद्र मोदी की अगुवाई वाली भाजपा का कोई विश्वसनीय विकल्प तैयार करना चाहते हैं।

विपक्ष के नेताओं और पार्टियों में कई ऐसे हैं जो इजारेदार पूंजीपतियों द्वारा मोदी और भाजपा के बेहतरीन विकल्प बतौर चुने जाने के बहुत इच्छुक हैं। इन नेताओं और पार्टियों के "भाजपा हटाओ!", "लोकतंत्र बचाओ!" जैसे नारों को बुलंद करने के पीछे इनके निहित स्वार्थ छिपे हैं। ये नेता और पार्टियां किसान आंदोलन को एक सीढ़ी की तरह इस्तेमाल करना चाहते हैं, जिस पर चढ़कर वे 2024 में भाजपा की जगह लेने के अपने सपने को पूरा करना चाहते हैं। ऐसे नेता और ऐसी पार्टियां मज़दूरों और किसानों को क्रांति के रास्ते से हटाने का काम कर रही हैं।

म.ए.ल. : तो कामरेड, क्या आप यह कह रहे हैं कि इस समय जो "लोकतंत्र बचाओ!" का नारा दिया जा रहा है, यह एक ख़तरनाक भटकाववादी नारा है?

लाल सिंह : हां मैं ठीक वही कह रहा हूं। जो यह नारा दे रहे हैं, वे हुक्मरान वर्ग की सेवा कर रहे हैं। वे मज़दूरों और किसानों के हितों की सेवा नहीं कर रहे हैं।

आज हम सबके सामने जो हक़ीक़त है, वह यह है कि संसद एक अति–धनवान अल्पसंख्यक तबके के हितों का प्रतिनिधित्व करती है। संसद में ऐसे क़ानून बनाए जाते हैं जो मुट्ठीभर इजारेदार पूंजीपतियों के हित के लिए होते हैं और मज़दूरों व किसानों के हितों के बिल्कुल ख़िलाफ़ होते हैं, जबकि मज़दूर और किसान आबादी की बहुसंख्या हैं। तो फिर मज़दूरों और किसानों को इस व्यवस्था को क्यों बचाकर रखना चाहिए?

यह समाज वर्गों में बंटा हुआ है और इस समाज के अंदर राजनीतिक व्यवस्था और राज्य के संस्थान हमेशा ही किसी एक या दूसरे वर्ग के हित में काम करेंगे। तो इस हक़ीक़त से हटकर, लोकतंत्र की बात करने का मतलब है इस हक़ीक़त को छिपाना।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था पूंजीवादी लोकतंत्र का एक रूप है। इसमें मज़दूरों और किसानों के अधिकार पूंजीपतियों की मनमर्जी के अधीन हैं। इस व्यवस्था के अंदर पूंजीपतियों के लिए, यानी उन सबके लिए जो संपत्ति के मालिक हैं और दूसरों के श्रम का शोषण करके अपने निजी धन का संचय

करते हैं, उनके लिए लोकतंत्र है। यह मज़दूरों, किसानों और दूसरे शोषित लोगों के लिए पूंजीपतियों का अधिनायकत्व है। इस व्यवस्था के अंदर क़ानून और नीतियां संपत्तिवान अल्पसंख्यक वर्ग के हितों के लिए बनाए जाते हैं और आबादी के अधिकांश हिस्से, यानी मेहनतकश बहुसंख्या, के हितों के ख़िलाफ़ बनाए जाते हैं।

हुक्मरान पूंजीपति वर्ग चुनावों का इस्तेमाल करके, अपनी किसी एक खास मैनेजमेंट टीम का चयन करता है। पूंजीपति वर्ग यह सुनिश्चित करता है कि सिर्फ उन्हीं पार्टियों को, जो पूंजीपतियों के प्रति अपनी वफादारी साबित कर चुकी हैं, संसद में बहुमत हासिल करने की इजाज़त दी जायेगी।

चुनावों का उद्देश्य है लोगों को धोखा देना, लोगों को संघर्ष के रास्ते से भटकाना और बांटना। आज किसानों के एकजुट संघर्ष को आयोजित करने वाले इस बात को अच्छी तरह समझ रहे हैं। मिसाल के तौर पर, पंजाब में किसान आंदोलन के कई भागीदारों ने खुल्लम–खुल्ला अपनी इस चिंता को प्रकट किया है कि 2022 में होने वाले विधानसभा चुनाव में प्रतिस्पर्धी पार्टियों के चुनाव अभियान के कारण किसान आंदोलन की एकता पर नकारात्मक असर पड़ सकता है।

लोकतंत्र की व्यवस्था को बचाने का नारा पूंजीपतियों का नारा है। विपक्षी पार्टियां इस नारे को बार–बार उछालती हैं क्योंकि वे मजदूरों और किसानों को बुद्धू बनाने की कोशिश करती हैं और उन्हें पूंजीपतियों के अधिनायकत्व के अन्दर बांध कर रखना चाहती हैं।

संसदीय लोकतंत्र की वर्तमान व्यवस्था हिन्दोस्तान में नहीं बनी। इसे ब्रिटेन में बनाया गया था। ब्रिटेन के पूंजीपतियों ने इस पराई व्यवस्था को हिन्दोस्तान की भूमि पर थोप दिया था। उन्होंने इस व्यवस्था का इस्तेमाल करके हिन्दोस्तान के बड़े पूंजीपतियों और बड़े जागीरदारों की पार्टियों को प्रशिक्षण दिया, उस शोषण और दमन की व्यवस्था को बरकरार रखने के लिए, जिस व्यवस्था को ब्रिटिश ने यहां स्थापित किया था। आज़ादी के बाद हिन्दोस्तान के पूंजीपतियों ने इस व्यवस्था को अपनी ज़रूरतों के अनुकूल बना लिया और लोगों को बांटकर उन पर राज करने के लिए उसे और सक्षम बना लिया। हिन्दोस्तानी लोगों के लिए इस व्यवस्था को बचाए रखने की कोई वजह नहीं है।

हमारे असली देशभक्तों और क्रांतिकारी योद्धाओं ने हिन्दोस्तान में ब्रिटिश उपनिवेशवादी राज्य के ख़िलाफ़ संघर्ष किया था। उनका यह असूल था कि हिन्दोस्तान के लोगों को खुद ही फ़ैसला करना होगा कि जब यहां ब्रिटिश शासन ख़त्म होता है तो किस प्रकार की राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था स्थापित होनी चाहिए।

1857 के बागियों ने ऐलान किया था "हम हैं इसके मालिक, हिन्दोस्तान हमारा"।

1913 में हिन्दोस्तान ग़दर पार्टी की स्थापना हुई थी। हिन्दोस्तान ग़दर पार्टी ने ऐलान किया था कि उसका उद्देश्य है ब्रिटिश उपनिवेशवादी राज का संपूर्ण तख्तापलट और संयुक्त राज्य हिन्दोस्तान के संघीय गणराज्य की स्थापना।

शहीद भगत सिंह और हिन्दोस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के उनके साथियों ने सभी प्रकार के शोषण और दमन को ख़त्म करने को वचनबद्ध, एक नए राज्य की स्थापना के लिए संघर्ष किया था।

1947 में हमारे क्रांतिकारी शहीदों के इस उद्देश्य, इस लक्ष्य के साथ विश्वासघात किया गया था। राजनीतिक सत्ता को लंदन से दिल्ली में हस्तांतरित किया गया, परंतु सत्ता लोगों के हाथों में नहीं आई। सत्ता बड़े पूंजीपतियों के हाथ में आई, जिनका बड़े जागीरदारों के साथ गठबंधन था। बड़े पूंजीपतियों ने समझा कि ब्रिटिश पूंजीपतियों ने हिन्दोस्तानी लोगों को बांट कर उन पर राज करने के लिए जो राज्य स्थापित किया था, उसी को बरकरार रखना तथा और सक्षम बनाना उनके अपने हितों के लिए लाभकारी होगा।

लोकतंत्र की हिफ़ाज़त करने के इस नारे का मतलब है उन संस्थानों, सिद्धांतों और मूल्यों की रक्षा करना, जिन्हें ब्रिटिश पूंजीपतियों ने हमारे ऊपर थोप दिया था।

प्रधानमंत्री मोदी प्राचीन हिन्दोस्तान में तरह–तरह के लोकतंत्र के नमूनों के बारे में बात करते हैं। परंतु जिस सरकार की वे अगुवाई कर रहे हैं, वह सरकार ऐसी राजनीतिक व्यवस्था को चला रही है, जो अंग्रेजी वेस्टमिंस्टर व्यवस्था के नमूने के अनुसार बनाई गई है।

भाजपा के कई नेता राज धर्म या हिन्दोस्तानी राजनीतिक सिद्धांत के बारे में बात करते हैं। परंतु भाजपा राज धर्म के उस मूल असूल का हनन करती है, कि राज्य का फर्ज़ है सभी लोगों की सुख और सुरक्षा सुनिश्चित करना।

भाजपा यह दिखावा करती है कि वह हिन्दोस्तानी दर्शनशास्त्र का पालन कर रही है और कांग्रेस पार्टी की यह आलोचना करती है कि कांग्रेस पार्टी पश्चिमी विचारों से प्रभावित है। परंतु भाजपा सरकार चलाने में उन्हीं बरतानवी–अमरीकी नुस्ख़ों का पालन करती है, जिनका कांग्रेस पार्टी भी पालन करती है। मिसाल के तौर पर, मोदी जी का नारा "कम से कम सरकार और ज्यादा से ज्यादा शासन", यह उसी तथाकथित मुक्त बाज़ार विचारधारा की एक स्पष्ट अभिव्यक्ति है, जिसे विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और दूसरी साम्राज्यवादी संस्थाएं बढ़ावा दे रही हैं।

कम से कम सरकार का मतलब है कि सरकार को सबके लिए रोटी, कपड़ा और बुनियादी ज़रूरतें सुनिश्चित करने की ज़िम्मेदारी से पीछे हट जाना चाहिए। सरकार को अर्थव्यवस्था में अपनी भूमिका को कम से कम कर देना चाहिए और सब कुछ तथाकथित बाज़ार की ताक़तों के हाथों में छोड़ देना चाहिए, जिसका यह मतलब है कि सब कुछ मुनाफ़े के लालची इजारेदार पूंजीपतियों के हाथों में छोड़ देना चाहिए। ज्यादा से ज्यादा शासन का मतलब है विश्व बैंक के 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' के सूचकांक में हिन्दोस्तान को ऊंचे स्थान पर लाना। इसका मतलब है मज़दूरों और किसानों की रोज़ी–रोटी और अधिकारों को कुचलकर, पूंजीपतियों के लिए अधिक से अधिक मुनाफ़ा कमाने के अच्छे हालात तैयार करना।

'हम हैं इसके मालिक हिन्दोस्तान हमारा!', 1857 के बाग़ियों का यह नारा हिन्दोस्तानी राजनीतिक सोच की एक अनमोल अवधारणा को सामने लाया। यह अवधारणा है कि लोग संप्रभु हैं। लोगों ने राज्य को जन्म दिया है। यह पश्चिमी पूंजीवादी सोच से बिल्कुल अलग है। पश्चिमी पूंजीवादी सोच के अनुसार राज्य वह है जो निजी

संपत्ति की रक्षा करता है और मुट्ठीभर संपत्तिवान अल्पसंख्यकों के विशेष अधिकार वाले रुतबे की हिफ़ाज़त करता है।

हमारे इतिहास में ऐसी अवधि थी जब लोग अपने नेता का चयन करते थे। यह 'प्रजा' शब्द से पता चलता है, जिसका अर्थ है राजा को जन्म देने वाला। लोगों ने अपने नेता को चुनने का अधिकार तब खो दिया जब ऐसी राजशाहियां पैदा हुईं जिनमें किसी व्यक्ति के अधिकार और फ़र्ज़ उसकी जाति के आधार पर निर्धारित होने लगे। समाज में उत्पन्न बेशी मूल्य को उस अल्पसंख्यक वर्ग ने हड़प लिया जिनके बारे में यह माना जाने लगा कि उनको शासन करने का जन्मसिद्ध अधिकार है।

आज हमें हिन्दोस्तानी राजनीतिक सिद्धांत को आधुनिक बनाना है, जिसका मतलब है कि हमें उसे आधुनिक हालातों के अनुकूल बनाना है। लोग किसी राजा या रानी का चयन नहीं करेंगे, बल्कि एक ऐसे समूह का चयन करेंगे, जिसे लोग अपनी ताक़त का कुछ हिस्सा देंगे और निर्वाचित व्यक्ति को किसी भी समय वापस बुलाने की ताक़त अपने हाथों में रखेंगे। जिनको चुना जाता है, उनका यह फ़र्ज बनता है कि सबको सुख और सुरक्षा सुनिश्चित करें।

सुख और सुरक्षा को आज के हालातों के अनुसार परिभाषित करना होगा। आज मानव ज़रूरतों के अंदर शामिल है रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छ पीने का पानी, बिजली और इंटरनेट कनेक्टिविटी। यह मुमकिन है कि सभी लोगों को ये सारी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं, अगर अर्थव्यवस्था पर पूंजीपतियों की लालच को हावी न होने दिया जाए।

इन बातों को समेटते हुये, आज देश के मज़दूरों, किसानों और सभी प्रगतिशील ताक़तों के सामने यह काम नहीं है कि पूंजीवादी लोकतंत्र की मौजूदा व्यवस्था को बरकरार रखें, बल्कि हमारा काम है कि एकजुट होकर श्रमजीवी लोकतंत्र की उन्नत व्यवस्था के लिए संघर्ष करें। हमें एक ऐसी व्यवस्था के लिए संघर्ष करना होगा, जिसमें लोग सैद्धांतिक तौर पर और अभ्यास के तौर पर भी, सच्चे माइने में संप्रभु होंगे।

म.ए.ल. : किसानों की सुरक्षित रोज़ी–रोटी और खुशहाली सुनिश्चित करने के लिए किन ठोस क़दमों को लेना होगा?

लाल सिंह : कृषि में जो क़दम लेने होंगे, उन्हें पूरी अर्थव्यवस्था को नई दिशा दिलाने के लिए ज़रूरी क़दमों के हिस्सा बतौर समझना होगा। क्या उत्पादन होगा, कितना उत्पादन होगा, उसमें कितना निवेश होगा, कितने लोगों को अलग–अलग कामों पर लगाया जाएगा, कितने कृषि उत्पादन को ख़रीदा जाएगा और किस क़ीमत पर खरीदा जाएगा, यह सब इस समय अधिकतम मुनाफ़ों के लिए इजारेदार पूंजीपतियों की लालच के आधार पर निर्धारित की जाती है। इसे बदलना होगा और अर्थव्यवस्था को पूरी आबादी की भौतिक और सांस्कृतिक ज़रूरतों की अधिक से अधिक हद तक पूर्ति करने के उद्‌देश्य के साथ चलाना होगा।

यह ज़रूरी है कि पूरी आबादी के जीवन स्तर को लगातार ऊपर उठाया जाए। इसके लिए हमें खाद्य उत्पादन में बहुत वृद्धि करनी होगी। देश को नए मकान, स्कूल, अस्पताल, सीमेंट और स्टील का उत्पादन, नए–नए हाईवे, आदि चाहिएं। काम करने के क़ाबिल पुरुषों और स्त्रियों को काम पर लगाने के लिए बहुत सारी संभावनाएं होंगी।

कृषि उत्पादों और दूसरी ज़रूरी सामग्रियों के व्यापार को सामाजिक मालिकी और नियंत्रण में लाना – यह एक तत्कालीन क़दम है।

कृषि उत्पादों की बिक्री और सभी फ़सलों की ख़रीदी को सार्वजनिक नियंत्रण में लाना होगा। केंद्र और राज्य सरकारों की एजेंसियों को मुनासिब दामों पर सभी कृषि की लागत की वस्तुओं की पर्याप्त सप्लाई सुनिश्चित करनी होगी। उन्हें अधिक से अधिक कृषि उत्पादों की ख़रीदारी, भंडारण और वितरण को भी आयोजित करना होगा। सार्वजनिक ख़रीदारी की व्यवस्था से शुरू करके, सार्वजनिक वितरण व्यवस्था की स्थापना करनी होगी, जिसमें रोजमर्रे की ज़रूरत की सभी चीजें उपलब्ध होंगी।

जब राज्य अधिकतम मात्रा में अधिकतम कृषि उत्पादों का ख़रीदार हो जाएगा तब यह सुनिश्चित करना मुमकिन हो जाएगा कि सभी किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य प्राप्त हो। शहरी मज़दूरों को जो ऊंची क़ीमत देनी पड़ती है और किसान उत्पादक, दाल, सब्जी, तिलहन और दूसरे कृषि उत्पादों के लिए जो कम दाम पाते हैं, इन दोनों के बीच में बड़ी खाई को कम करना मुमकिन होगा।

किसान संगठनों और गांव के दूसरे जन संगठनों को कृषि बाज़ारों पर नियंत्रण करना पड़ेगा। मज़दूरों की यूनियनों और शहरों में अलग–अलग जन संगठनों को शहरी खुदरा बिक्री की दुकानों पर नियंत्रण करना होगा।

अगर ये सारे क़दम लिए जाएं, तो करोड़ों किसानों को रोज़ी–रोटी की सुरक्षा मिलेगी। लेकिन तब भी, बहुत ग़रीब किसान जो छोटे–छोटे

पट्टे पर खेती करते हैं, उनके लिए जीना बहुत मुश्किल होगा। ज़मीन के पट्टे का छोटा होना और उसके ऊपर कृषि का काम लाभदायक न होना, इस समस्या को हल करने के लिए अलग–अलग किसानों के बीच में स्पर्धा की जगह पर सहकार्य स्थापित करना पड़ेगा।

केंद्र और राज्य सरकारों को सहकारी खेती की स्थापना को प्रोत्साहन और समर्थन देना होगा। व्यापार के साथ शुरू करके, फिर आगे चलकर, किसानों द्वारा स्वेच्छा के साथ अपनी ज़मीन के पट्टों के सम्मिलन को आयोजित करना होगा। सामूहिक खेती, जिसमें कई किसान अपनी ज़मीन के पट्टों को इकट्ठा करके उसके ऊपर खेती करते हैं, उससे कृषि की उत्पादकता बढ़ेगी और ग्रामीण आमदनी भी बढ़ेगी। सरकार को सामूहिक खेती के लिए किसानों को सशक्त बनाने की हर प्रकार की मदद देनी चाहिए। सरकार को मुफ्त में या कम दाम पर आधुनिक टेक्नोलॉजी, मशीनरी और तकनीकी मदद देनी चाहिए।

ये सारे क़दम लिए जा सकते हैं, अगर मज़दूर और किसान खुद फ़ैसले लेने वाले हों। पूंजीपतियों की कोई भी सरकार इन क़दमों को लागू नहीं करेगी क्योंकि ये इजारेदार पूंजीपतियों के हितों के ख़िलाफ़ हैं।

हमें इन क़दमों को लागू करने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा। हम अच्छी तरह जानते हैं कि पूंजीपति वर्ग पूरी कोशिश करेगा कि हमें कुछ न दिया जाए। हमें अपनी ताक़त और जुझारू क्षमता को मजबूत करना होगा ताकि हुक्मरानों को कुछ हद तक हमारी मांगों को पूरा करने को मजबूर होना पड़े या फिर पूरी तरह बदनाम होना पड़े। इस संघर्ष के दौरान हम मज़दूरों और किसानों को अपने हाथों में राजनीतिक सत्ता लेने के क़ाबिल, एक शक्तिशाली ताक़त बन जाना चाहिए।

हम मेहनतकश लोगों को अपने देश के भविष्य की बागडोर को अपने हाथों में लेना होगा। ऐसा करके ही हम अर्थव्यवस्था को लोगों की ज़रूरतों को पूरा करने की दिशा में चला पाएंगे।

हमें संसदीय लोकतंत्र की वर्तमान व्यवस्था, जो कि पूंजीपतियों के शासन का एक रूप है, उसकी जगह पर मज़दूरों और किसानों के लोकतंत्र की नई व्यवस्था को स्थापित करने के रणनीतिक लक्ष्य के साथ, अपने फौरी संघर्ष को आगे बढ़ाना होगा।

1913 में स्थापित की गई हिन्दोस्तान ग़दर पार्टी के बुद्धिमत्तापूर्ण शब्दों और दिलेर कार्यों से एक अहम सीख यह मिलती है कि किसी भी सभ्यतापूर्ण हिन्दोस्तानी गणराज्य को इस देश के अंदर हर घटक राष्ट्र, राष्ट्रीयता और लोगों के अधिकारों का आदर और रक्षा करनी चाहिए। हिन्दोस्तानी संघ का वर्तमान गणराज्य और उसका संविधान इस संघ के हर एक घटक के राष्ट्रीय अधिकारों को मान्यता भी नहीं देता है, तो उनकी रक्षा करने की बात तो बहुत दूर की रही।

पंजाब के कुछ लोग कह रहे हैं कि आज सभी पंजाबियों के लिए, एकजुट होकर पंजाब को बचाने का संघर्ष करने का समय आ गया है। सच तो यह है कि आज वक्त की पुकार यह है कि सभी पंजाबी, तमिल, बंगाली, बिहारी मराठी, कन्नड़, मलयाली, गुजराती, हरियाणवी, असमीय, मणिपुरी और सभी लोग एकजुट हो जाएं। हम सबका शोषण करने वाला वही हिन्दोस्तानी पूंजीपति वर्ग है। हम सबका दमन करने वाला वही एक हिन्दोस्तानी राज्य है। हमारा संघर्ष एक है, एक सांझे दुश्मन के ख़िलाफ़ है। सभी राष्ट्रीयताओं

के मज़दूरों और किसानों, महिलाओं और नौजवनों को एकजुट होना होगा और संघर्ष करना होगा। ऐसा करके ही हम उस वर्ग को हरा सकते हैं जो आज हमारे ऊपर शासन कर रहा है।

पंजाब को बचाने के लिए हमें हिन्दोस्तान को बचाना होगा। हमें हिन्दोस्तान को इजारेदार पूंजीपतियों की पूंजीवादी आर्थिक दिशा, अमानवीय राजनीतिक सत्ता और समाज–विरोधी साम्राज्यवादी क़दमों से बचाना होगा।

हमें हिन्दोस्तानी गणराज्य का पुनर्गठन करना होगा। इस देश के सभी राष्ट्रों, राष्ट्रीयताओं और लोगों के स्वतंत्र और समान अधिकार वाले संघ के रूप में उसका पुनर्गठन करना होगा। आफ्स्पा, यू.ए.पी.ए. और सभी दूसरे काले क़ानूनों को फ़ौरन रद्द करना होगा। हमें एक ऐसा संविधान अपनाना होगा जिसमें लोग संप्रभु होंगे और मानव अधिकारों तथा जनवादी अधिकारों को अलंघनीय माना जाएगा।

हमें हिन्दोस्तान की विदेश नीति और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को नई दिशा देनी होगी। इसे अमरीकी साम्राज्यवाद की रणनीति के साथ जुड़ी हुई दिशा से बदलकर, सभी साम्राज्यवाद विरोधी ताक़तों के साथ जुड़ी हुयी, दक्षिण एशिया में और पूरी दुनिया में शांति के कारक बतौर नई दिशा देनी होगी।

संक्षेप में, आज के हालात हिन्दोस्तान के नव–निर्माण की मांग कर रहे हैं, जो कि उदारीकरण और निजीकरण और इसके साथ–साथ राजकीय आतंकवाद के वर्तमान कार्यक्रम का सही विकल्प है।

वह दिन दूर नहीं है जब मज़दूर, किसान और सभी मेहनतकश और दबे–कुचले लोग फ़ैसले लेने के क़ाबिल होंगे। मज़दूरों और किसानों की हुकूमत की स्थापना के साथ–साथ, हिन्दोस्तानी समाज को संकट से बाहर निकालने का रास्ता भी खुलेगा।

तो अंत में मुझे यह कहने दीजिए, कॉमरेड, कि मुझे पूरा भरोसा है कि वह दिन दूर नहीं है, जब एक नए हिन्दोस्तान का जन्म होगा, जिसमें हम हिन्दोस्तान के लोग मालिक होंगे और जिस हिन्दोस्तान के अंदर सबको सुख और सुरक्षा सुनिश्चित होगी।

म.ए.ल. : कामरेड, इस रोचक, ज्ञानवर्धक और बहुत ही प्रेरक साक्षात्कार के लिए धन्यवाद।

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के हाल के प्रकाशन

भारतीय रेल का निजीकरण हमें मंजूर नहीं
पार्टी के प्रकाशित लेखों का संकलन
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(अक्तूबर 2021)

यह धर्म–युद्ध है मज़दूरों और किसानों का, अधर्मी राज्य के ख़िलाफ़!
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(जनवरी 2021)

बैंकों का विलय और निजीकरण
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(सितंबर 2020)

हुक्मरान वर्ग का ख़तरनाक साम्राज्यवादी रास्ता
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(अगस्त 2019)

भारतीय रेल के निजीकरण को एकजुट होकर हराएं
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(मई 2018)

ग़दरियों की पुकार – इंक़लाब
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(संशोधित संस्करण, फरवरी 2018)

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी के 5वें महाअधिवेशन की रिपोर्ट
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(अक्तूबर 2017)

नोटबंदी के असली इरादे और झूठे दावे
हिन्दी, पंजाबी, तमिल व अंग्रेजी में प्रकाशित
(जनवरी 2017)

यह चुनाव एक फरेब है!
हिन्दी, पंजाबी व अंग्रेजी में प्रकाशित
(जनवरी 2015)

घोषणापत्र 2014
हिन्दी व अंग्रेजी में प्रकाशित (अप्रैल 2014)

भ्रष्टाचार, पूंजीवाद और हिन्दोस्तानी राज्य
हिन्दी, पंजाबी, तमिल व अंग्रेजी में प्रकाशित
(मार्च 2014)

अन्य प्रकाशनों के लिये कृपया www.hindi.cgpi.org वेबसाइट पर जा कर पार्टी–दस्तावेज के मेनू पर क्लिक करें।

लोक आवाज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स से *प्राप्त करें :*
ई–392, संजय कालोनी, ओखला फेस–2, नई दिल्ली–110020,
email: lokawaz@gmail.com, फोन : +91 9868811998, 9810167911
प्रकाशन पाने के लिये जानकारी पिछले कवर पर पाइये

पाठक बनें

मज़दूर एकता लहर

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का अखबार

मज़दूरों का राज स्थापित करने के प्रति समर्पित

अपनी आवाज़ बुलंद करें!

मज़दूर एकता लहर आह्वान करती है कि अपने कार्यक्षेत्र में व आस-पास के मज़दूरों की समस्याओं और संघर्षों तथा अपने विचारों से हमें अवगत करायें।

मज़दूर एकता लहर का वार्षिक शुल्क और अन्य प्रकाशनों का भुगतान आप बैंक खाते और पेटीएम से भेजें

आप वार्षिक ग्राहकी शुल्क (150 रुपये) सीधे हमारे बैंक खाते में या पेटीएम क्यूआर कोड स्केन करके भेजें और भेजने की सूचना नीचे दिये फोन या वाट्सएप पर अवश्य दें।

खाता नाम–लोक आवाज़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स
बैंक ऑफ महाराष्ट्र, न्यू दिल्ली, कालका जी
खाता संख्या–20066800626, **ब्रांच नं.**–00974
IFSCode: MAHB0000974, मो.–9810187911
वाट्सएप और पेटीएम नं.–9868811998
email: mazdoorektalehar@gmail.com

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी

ई–392, संजय कालोनी, ओखला फेस–2, नई दिल्ली–110020
+91 9810167911
http://www.cgpi.org, youtube:Lal Ghadar
https://www.facebook.com/ghadarparty.in/

WhatsApp
09868811998

वितरक :
लोक आवाज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स
ई–392, संजय कालोनी, ओखला फेस–2
नई दिल्ली–110020
ईमेल : lokawaz@gmail.com
फोन : +91 9868811998, 9810167911